ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2019; 5(9): 359-362
www.allresearchjournal.com
Received: 19-05-2019
Accepted: 22-07-2019

राजीव कुमार प्रसाद
हिंदी शोधार्थी, यु० जी० सी० नेट, ल० ना० मि० वि०, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
राजीव कुमार प्रसाद
हिंदी शोधार्थी, यु० जी० सी० नेट, ल० ना० मि० वि०, दरभंगा, बिहार, भारत

आधे - अधूरे: आधुनिक - युगीन सांस्कृतिक - पारिवारिक विघटन का जीवन्त दस्तावेज!

राजीव कुमार प्रसाद

सारांश:
आधे - अधूरे नाटक को मोहन राकेश ने अपने पूर्ववर्ती नाटकों - 'आषाढ़ का एक दिन', ' लहरों के राजहंस' की भाँति ऐतिहासिक न बनाकर इसमें आधुनिक सन्दर्भो का उल्लेख किया है। आज के समय में हमारा समाज - विशेषकर नगरीय समाज एक प्रकार से सांस्कृतिक संक्रमण काल से गुजर रहा है। आध्यात्मिकता का लोप होता जा रहा है, हमारे मन से संतोष, धैर्य, सौहार्द आदि गायब होते जा रहे हैं और उनके स्थान पर भौतिकता का साम्राज्य विस्तृत होता जा रहा है। हम भौतिकता के मोहजाल में ऐसे फँस गये हैं कि अब उससे बचने या बाहर निकलने के लिए भी हम कसमसा कर रह जाते हैं। स्वतन्त्रता - प्राप्ति के पश्चात् जब नारी को घर की चाहरदीवारी से बाहर निकलकर कामकाजी, नौकरी - पेशा वाली स्त्री के रूप में काम करने का अवसर मिला तो वह अनेक पुरुषों के सम्पर्क में आई और इस प्रकार युगों - युगों से दबी आ रही विकृत काम - कुण्ठा अपनी समस्त बाधाओं, मर्यादाओं आदि को तोड़कर बाहर निकल आई। विशेषकर मध्य वर्ग के परिवारों में इस भौतिकवादी प्रवृत्ति ने अटूट माने जाने वाले पति - पत्नी, माँ - बेटी आदि के रिश्तों को उसी तरह खोखला कर दिया जिस प्रकार दीपक लकड़ी को और घुन गेंहूं को खोखला कर देते हैं। मोहन राकेश ने ' आधे - अधूरे ' नाटक में इसी आधुनिक - युगीन सांस्कृतिक - पारिवारिक विघटन को दर्शाया है। यह नाटक आधुनिक युग के आधे - अधूरे समाज, परिवार, व्यक्ति, सम्बन्ध आदि के मूल बिन्दुओं को दर्शाता है तथा स्त्री - पुरुष के सम्बन्धों, अमानवीय स्थितियों और पारिवारिक विघटन का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं जीवन्त दस्तावेज़ बन गया है।

मूल शब्द: मौलिक वास्तविक। व्यर्थ बेकार। हमेशा - निरन्तर, लगातार। कमाऊ - कमाने वाला। साल- वर्ष। जिन्दगी- जीवन। ढंग - तरीका। सारा - सम्पूर्ण। क्षुब्ध - पीड़ा। उपेक्षा - तिरस्कार। इज्जत- मर्यादा। भरोसा – आशा। होम करना – नष्ट करना। खास- नजदीकी। जगह- स्थान। प्रवृत्ति - इच्छा। चैन- सुख। आरोप- लांछन। अंग- हिस्सा, भाग। सर्वदा- हमेशा। स्नेह- प्रेम।

प्रस्तावना
मोहन राकेश कृत यह नाटक समसामयिक समस्याओं, संवेदनाओं और जीवन के त्रासद के ताने - बाने से बुना गया नाटक के क्षेत्र में एक नवीन और साहसिक कदम है। इस नाटक में आधुनिक संदर्भो का उल्लेख करते हुए यांत्रिक सभ्यता के दबाव में एक मध्यमवर्गीय नागरिक परिवार के विघटन का यथार्थ चित्रण किया गया है। उच्च जीवन स्तर की आकांक्षा ने एक अच्छे खासे परिवार को अनुशासनहीन और आवारा बना दिया है। इस नाटक में एक स्त्री अपने लिए एक पूर्ण आदमी की तलाश में है।

इस तलाश का मुख्य कारण उसके दाम्पत्य जीवन की कटुता है। विगत दस वर्षों से वह अपनी नौकरी के बल पर अपने परिवार का भरण - पोषण करती आ रही है; किन्तु स्वयं असंतुष्ट है और प्रतिदिन अधिक टूटती जाती है। वह अपने पति को पूर्ण पुरुष नहीं मानती, उसकी दृष्टि में वह आधा - अधूरा है, इसीलिए वह पूर्ण पुरुष की खोज में रहती है, इस क्रम में वह अन्य अनेक लोगों के सम्पर्क में आती है। इसी आधे - अधूरेपन के कारण नाटक के सभी पात्र अपने जीवन की स्वाभाविकता खो बैठते हैं। वास्तव में यह नाटक एक समस्या प्रधान नाटक है जो आज के विघटनशील परिवार का यथार्थ चित्रण करता है। नाटक के सभी पात्र अनिश्चित जीवनभोगी हैं, उनके क्रियाकलाप अनिश्चित हैं। इस नाटक का आरम्भ और अन्त दोनों अनिश्चित हैं, इसीलिए इस नाटक का नाम 'आधे - अधूरे' पूर्ण रूप में यथार्थ है। 'आधे - अधूरे' नाटक समसामयिक संवदेना की समसामयिक परिवेश में प्रभावशाली अभिव्यक्ति है। यह आज के इंसान की जिन्दगी की कहानी है।

'महेन्द्रनाथ' मोहन राकेश जी के नाटक 'आधे - अधूरे' का एक सशक्त पात्र है। वह इस नाटक का नायक है और एक अनुशासनहीन परिवार के आवारापन का भुक्तभोगी भी। वह स्वयं एक निठल्ला व्यक्ति और अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्तित्व के कारण अपने परिवार में न केवल उपेक्षा का पात्र बनता है वरन् उस उपेक्षा को झेलता भी है। नाटककार ने उसे उस वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया है जो अपने निठल्लेपन और घरघुसरेपन के कारण परिवार का मुखिया होते हुए भी अपमानजनक जीवन व्यतीत करने को विवश है। वह शंकालु होने के साथ - साथ ईर्ष्यालु भी है, उसका व्यक्तित्व टुटा हुआ और निराशाजनक है। अकर्मण्यता, उपेक्षा, अनिश्चितता, अभाव, कुण्ठा, विक्षोभ, टूटन, निराशा महेन्द्रनाथ की चारित्रिक विशेषता है। पराजित और असफल होने के बाद भी महेन्द्रनाथ के हृदय में अपने बच्चों के प्रति प्यार है किन्तु एक जबाबदेह पिता और पति की तरह उसमें स्वामित्व नहीं है। नाटककार ने यहाँ महेन्द्रनाथ के माध्यम से यह दिखाना चाहा है कि पश्चिमी सभ्यता के सम्पर्क में आने के बाद परिवार का जो ढाँचा बना है जिसमें एक बेकार पति, जिसकी पत्नी अर्थोपार्जन करती हो, दासता का जीवन जीने को मजबूर है। महेन्द्रनाथ इस नाटक का नायक है परन्तु नाटक का सबसे दुर्बल और दयनीय पात्र भी वही है। वह सबकी भर्त्सना सहता है किन्तु कुछ कह या कर नहीं सकता, अपमानित होकर घर छोड़कर चला भी जाता है किन्तु अपनी चारित्रिक दुर्बलता के कारण पुनः उसी घर में लौट भी आता है।

सावित्री कहीं नौकरी करती है। वह एक प्रकार से भोगवादी कामिनी नारी है। नाटककार ने उसके विषय में अपने मन्तव्य को अत्यन्त संक्षेप में किन्तु अत्यन्त प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत कर दिया है, ' उम्र चालीस की ' के साथ यह लिखना - ' चाहे ' फिर भी शेष बहुत कुछ अर्थ रखता है। जिस अवस्था में, विशेषकर तीन - तीन बच्चों की माँ बन जाने के बाद नारी की प्रायः समस्त भोगेच्छाएँ शान्त हो जानी चाहिए, इस अवस्था में सावित्री नये - नये प्रेमियों की ओर देखती है। 'फिर भी' शब्द का प्रयोग करके नाटककार ने इसी अस्वाभाविकता की ओर संकेत किया है। नाटककार के मन्तव्य का विश्लेषण नाटक के अन्त में जुनेजा प्रस्तुत करता है। यथा- असल बात इतनी ही है कि महेन्द्र की जगह इनमें कोई भी आदमी होता तुम्हारी जिंदगी में, तो साल - दो - साल बाद तुम यही महसूस करती कि तुमने एक गलत आदमी से शादी कर ली है। क्योंकि तुम्हारे लिए जीने का मतलब रहा है कितना कुछ एक साथ होकर, कितना कुछ एक साथ पाकर और कितना कुछ एक साथ ओढ़ कर जीना।

सावित्री हमारे सामने एक ऐसी नारी के रूप में आती है, जो जीवन का लक्ष्य शरीर सुख मानती है, मातृत्व के निर्वाह को जो उपेक्षा की दृष्टि से देखती है। वह एक ऐसी आधुनिक नारी है जो सदैव युवती बनी रहने के स्वप्न देखती हैं और बिना कुछ किए - दिए सब कुछ पा लेना चाहती है। ऐसी नारी कुण्ठाग्रस्त होकर क्रोध और क्लेश का जीवन व्यतीत करती है। वह अपने आपको पतित करती है और अपने परिवार के भविष्य को नष्ट कर देती है। महेन्द्रनाथ जैसे पति को भी वह अस्वीकार करके ' जिनि स्वतन्त्र भये बिगरे नारी ' लोकोक्ति का उदाहरण प्रस्तुत करती है।

स्वतंत्रता के पश्चात् मध्यवर्ग में आर्थिक विषमताओं ने क्रमशः पारिवारिक बिखराव, मानसिक तनाव और नैतिक पतन को बढ़ावा दिया है। इसी मानसिक तनाव और नैतिक पतन में आज की संत्रासपूर्ण परिस्थितियों का नाटककार मोहन राकेश ने यथार्थ चित्रण किया है। यह नाटक मध्यवर्गीय जीवन में आने वाली शुष्क और विनाशकारी रिक्तता को उधाड़नेवाला, मनुष्य के खोखलेपन सम्बन्धों तथा जीवन - आदर्शों व आस्थाओं के लड़खड़ाते मानदण्डों का सजीव चित्रण उपस्थित करता है। यह विषम परिस्थितियों में उलझे पात्रों की मनःस्थिति की टकराहट अन्तर्व्यथा, द्वन्द्व, आक्रोश, कुंठाएँ एवं अभिशप्तता को उजागर करती हुई गति देती है। पाँच सदस्यों के परिवार में आर्थिक कठिनाइयों ने इस घर को विषाक्त और दमघोंटू बना दिया है, नियति ने उन्हें पंगु और आवारा बना दिया है। उच्च स्तर की चाह ने इस परिवार की मुखिया को अनैतिकता के गड्ढे में ढकेल दिया है। इस परिवार में नाटक के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक समस्याएँ ही हैं।

इसीलिए 'आधे - अधूरे' नाटक को समस्या प्रधान नाटक कहा जाता है।

'आधे - अधूरे' की कथावस्तु एक परिवार तक सीमित है, परन्तु यह एक परिवार की कहानी न होकर सामान्य मध्यवर्गीय परिवार और उसके त्रासद की कहानी बन जाती है। इस नाटक का प्रमुख पात्र महेन्द्रनाथ जो इस परिवार का मुखिया है वह एक बेरोजगार, निराश और असफल पति है। जब उसका व्यापार चलता था तो वह एक परिन्दा था, लेकिन निठल्ला हो जाने के बाद दब्बू बन गया। आर्थिक दृष्टि से पत्नी की कमाई पर निर्भर रहने के कारण कमजोर और मानसिक रूप से अस्थिर हो गया। तीन बच्चों का पिता और परिवार का मुखिया होने के बावजूद वह महत्त्वहीन और परिवार का बोझ है। महेन्द्रनाथ के असहाय और महत्त्वहीन समझे जाने के कारण ही वह कुंठा का शिकार हो जाता है। महेन्द्रनाथ जिन्दगी की लड़ाई से हारा हुआ और छटपटाहट का शिकार है। जब उसकी कमाई अच्छी थी तो वह सावित्री की इच्छाओं की पूर्ति के लिए, घर की साज - सजावट के लिए नये - नये सामान खरीदने में, ऐय्याशी में अपनी सारी कमाई गँवा दी और आज जब वह सारी पूँजी गँवाकर बेकार हो गया तो पत्नी उसे महत्त्वहीन और निठल्ला समझकर उसकी अवहेलना करती है। 'आधे - अधूरे' नाटक की मुख्य नायिका सावित्री है, जो महेन्द्रनाथ की पत्नी है। पति के बेरोजगार हो जाने के बाद वह परिवार के भरण - पोषण के लिए नौकरी करती है और इसी क्रम में अन्य पुरुषों के सम्पर्क में आकर आवारा हो जाती है। सावित्री के यौन लालसाओं की पूर्ति के लिए अन्य अनेक पुरुषों से उसका सम्पर्क महेन्द्रनाथ को असह्य हो जाता है, उसके आचरण से आक्रोशित होकर उसपर तरह - तरह से अत्याचार करता है।

आधे - अधूरे ' नाटक के इस परिवार का बड़ा लड़का अशोक है जो अपने परिवार के तनावपूर्ण और विषाक्त वातावरण को देख विद्रोही हो उठता है। उसे पिता को पिता और माँ को माँ कहना अच्छा नहीं लगता। उसे इन सब वास्तविक बातों से घृणा हो गयी है। अशोक इस नाटक में युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है। उसके चरित्र में युवा पीढ़ी की सभी विशेषताएँ मिलती हैं जिनके कारण आज की युवा पीढ़ी उच्छृखल और आवारा बन जाते हैं। अशोक की वितृष्णा अपने परिवार का घुटन भरा वातावरण और माता - पिता के आपसी तनावपूर्ण सम्बन्ध के कारण है। नाटककार ने यहाँ दर्शाया है कि यह समस्या सिर्फ अशोक के परिवार की नहीं बल्कि आज के मध्यवर्गीय परिवार की ही है। जो आज के युवा पीढ़ी को विद्रोही बना रही है।

सावित्री की दो बेटियाँ हैं बिन्नी और किन्नी। बिन्नी जो अपने अनुशासनहीन और चरित्रहीन परिवार की यंत्रणाओं का शिकार है। वह एक ऐसे विघटनशील परिवार की सदस्य है जहाँ उसे आवारापन की शिक्षा ही मिली है। पारिवारिक विषाक्ता ने उसके व्यक्तित्व को कुचल डालता है वह बिखर जाती है। उसमें भावी सावित्री का चरित्र नजर आता है वह अपनी माँ के चरित्र को ही विस्तारित करती नजर आती है। बिन्नी (बीना) अपनी माँ के एक पुरुष मित्र मनोज के साथ भाग जाती है। बाद में आपसी सम्बन्ध नहीं बनने के कारण निर्लज्ज की तरह अपनी माँ के पास आ जाती है। वह बिल्कुल सावित्री का प्रतीक है- जो घर के कुंठित और दमघोंटू वातावरण से मुक्ति पाने के लिए घर से भागती जरूर है किन्तु फिर वापस चली आती है। बिन्नी के चरित्र में एक बिखराव है जो बनने से पहले ही टूटने लगती है। वह मनोज के साथ रहते हुए भी असंतुष्ट ही रहती है। प्रस्तुत नाटक की एक पात्र किन्नी है जो सावित्री को छोटी बेटी है। यह एक ऐसी बच्ची का प्रतीक है जो माता - पिता की उपेक्षा के कारण उम्र से पहले यौन - प्रसंगों में रुचि लेने लगती है। एक ऐसा परिवार, जिसकी मुखिया आचरणहीन स्त्री है उसके बच्चे किस तरह बिखर कर टूट जाते हैं और उनका किस हद तक नैतिक पतन हो जाता है इसका इस नाटक में सशक्त चित्रण हुआ है। यह नाटक यह भी दर्शाता है कि माँ के चरित्र की छाया बेटी पर निश्चित रूप से पड़ती है।

प्रस्तुत नाटक पूर्णतः यथार्थवादी शैली पर आधारित है, जिसमें अनेक सार्थक प्रतीकों का प्रयोग यथार्थ की कटुता को व्यक्त करता है। कमरे के तीनों दरवाजे सावित्री के जीवन में प्रवेश करने वाले तीन पुरुषों का प्रतीक है। यह नाटक ऐसे आधुनिक महानगरीय मध्य - निम्नवित्तीय परिवार की स्थिति का यथार्थ चित्रण है, जो स्तरीकरण की दौड़ में अपने आपको पतन के गर्क में डुबो लेता है फिर भी अतृप्त और अधूरापन ही महसूस करता है। यह नाटक दो पीढ़ियों के अधूरेपन की एक जबर्दस्त विसंगति है। जहाँ बड़ी उम्र के लोग सावित्री, जगमोहन, सिंहानिया आदि युवाओं जैसा व्यवहार करते हैं और एक बारह - तेरह वर्ष की बच्ची एक युवती की तरह सेक्स चर्चा में आनन्द लेती है। बड़ी लड़की अपनी माँ के प्रेमी के साथ ही भाग जाती है और लड़का नंगी तस्वीरों को काटने में दिन गुजारता है।

मोहन राकेश का 'आधे - अधूरे' नाटक तनाव और संघर्ष की कहानी है जिसकी परिणति झल्लाहट, असंतोष और जीवन के विघटन के चीख - पुकार के रूप में देखी जा सकती है। उन्होंने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों की भाँति अपने नाटकों में भी मनोवैज्ञानिकता का सहारा लिया है, अपनी इसी मनोवैज्ञानिकता के कारण उनके नाटक के सभी पात्र यथार्थ प्रतीत होते हैं और उनके क्रियाकलाप सजीव हो जाते हैं। 'आधे - अधूरे' मोहन राकेश कृत एक ऐसा नाटक है जो

स्त्री - पुरुष के सम्बन्धों में तनाव का उसके सम्बन्धों के खोखलेपन का, पारिवारिक विघटन का और पूरे परिवार के अभिशाप ग्रस्तता का सटीक चित्रण करता है। इस परिवार का हर सदस्य अपने आप में अपूर्ण होते हुए दूसरे में अपूर्णता की खोज करते हैं, विघटनशील परिवार के सभी सदस्य आधे - अधूरे हैं। इसीलिए वे पूर्णता की तलाश में भटकते रहते हैं और अनैतिकता के जंजाल में फँस जाते हैं। इस अधूरेपन के नाटककार ने महेन्द्रनाथ, सावित्री एवं उसके बच्चे अशोक, बिन्नी और छोटी लड़की किन्नी के माध्यम से बड़े सशक्त रूप में चित्रित किया है।

सावित्री जो 'आधे - अधूरे' नाटक की नायिका के साथ - साथ इस नाटक की एक महत्त्वपूर्ण और सशक्त पात्र है- उसमें आधे - अधूरेपन का सबसे प्रखर रूप देखने को मिलता है। महेन्द्रनाथ के बेकार हो जाने के बाद उसे नौकरी करनी पड़ी, उसमें उच्च सामाजिक स्तर को बनाये रखने की चाह तीव्र होती गयी। वह सामाजिक प्रतिष्ठा के साथ - एक पूरा आदमी चाहती है इसलिए अपनी इस महत्त्वकांक्षा की पूर्ति के लिए वह समाज के ऊँचे ओहदे वाले प्रतिष्ठित व्यक्तियों के सम्पर्क में आती है। धीरे - धीरे उसकी आवारगी बढ़ती जाती है। उसे अपना पति आधा अधूरा लगता है। महेन्द्रनाथ के आरामतलबी और घर - घुसरेपन से वह कुढ़ती है। अपने आन्तरिक अधूरेपन को भरने के लिए वह पुरुष - मित्रों के साथ घूमती रहती है, उन्हें अपने घर आमंत्रित करती है। सावित्री अपनी आर्थिक असमर्थता को ढोने के लिए कभी घर का दामन थामती है तो कभी बाहर का, लेकिन वह हमेशा मानसिक रूप से असन्तुष्ट रहती है। पूर्ण पुरुष की लालसा में वह अपने पति महेन्द्रनाथ के अतिरिक्त एक पुरुष की प्रप्ति के लिए वह जगमोहन, मनोज, जुनेजा, सिंघानिया आदि के सम्पर्क में आती है परन्तु ये आदर्श पुरुष सावित्री के साथ खिलवाड़ कर उसे छोड़ देते हैं। मानसिक असन्तुलन के कारण वह अपना आक्रोश बच्चों पर उतारती है। सारा परिवार सावित्री को ही धिक्कारता है। वह जगमोहन के साथ जाने का निर्णय लेती है लेकिन यहाँ भी उसे असफलता ही हाथ लगती है।

'आधे - अधूरे' नाटक की यह समस्या केवल अकेले महेन्द्रनाथ की नहीं बल्कि हमारा समाज - खासकर नागर - समाज भौतिक सभ्यता के मकड़जाल में इस तरह उलझ गया है कि उसे कसमसाने के सिवाय कोई दूसरा रास्ता नजर नहीं आता। आधुनिक भारतीय समाज की नारी परिवार के आर्थिक बोझ को कम करने के लिए घर से बाहर निकलकर नौकरी करने लगी और अन्य पुरुषों के सम्पर्क में आने लगी तो युगों पूर्व से विकृत काम - कुण्ठा ने मर्यादा का बाँध तोड़ दिया जिसके परिणामस्वरूप मध्यमवर्ग एक ऐसी यंत्रणा से होकर गुजर रहा है कि परिवार अब परिवार नहीं रहा। आज का महानगरीय मध्यमवर्गीय परिवार एक अजीब घुटन, अलगाव, दिशाहीनता, ईर्ष्या, कलह, मृगतृष्णा और आवारगी के दारै से गुजर रहा है। राकेशजी ने अपने इस नाटक 'आधे - अधूरे' में इसी समस्या को चित्रित किया है।

निष्कर्ष

मोहन राकेश कृत 'आधे - अधूरे' नाटक में आधुनिक युगीन सांस्कृतिक संकट की समस्या को प्रस्तुत किया गया है। हमारा आज का महानगरीय मध्यवर्गीय समाज जिन हीनताओं और अर्थलोलुपता से ग्रस्त है तथा उच्च जीवन स्तर की महत्त्वाकांक्षा उसे जिस प्रकार अनैतिकता की ओर बढ़ने की प्रेरणा दे रही है यह हमारे भारतीय परिवार के लिए संकट की सूचना है इसी समस्या को नाटककार ने इस नाटक के माध्यम से चित्रित किया, उसी का चित्रण करना नाटककार का प्रमुख उद्देश्य है। डॉ ० विजय बापट ने 'आधे - अधूरे' नाटक के उद्देश्य अथवा उसमें उठायी गयी समस्या का विवेचन करते हुए लिखा है- 'आधे - अधूरे' बेहद चर्चा वाला नाटक है जिसमें आधुनिक जीवन का साक्षात्कार प्रस्तुत किया गया है। इस नाटक में विघटित होते हुए आज के मध्यवर्गीय शहरी परिवार का कडवाहट भरा चित्रण किया गया है जिसकी विडम्बना यह है कि व्यक्ति स्वयं अधूरा होते हुए भी औरों के अधूरेपन को सहना नहीं चाहता। काल्पनिक पूरेपन की तलाश में भटककर अपनी और दूसरों की जिन्दगी को नरक बना देता है। नाटककार इस प्रक्रिया को विशेष व्यक्तियों या परिवारों तक सीमित न रखकर सामान्य मानता है। इसी कारण वह पात्रों के नाम न देकर पुरुष एक, पुरुष दो, पुरुष तीन, पुरुष चार, स्त्री, लड़का, बड़ी लड़की, छोटी लड़की कहकर पात्रों को प्रस्तुत करता है। वैसे बाद में उनके नाम भी दे दिये जाते हैं। लगता है नाटककार जातिगत नाम ही उभारना चाहता है। इस नाटक में महानगरों में रहने वाले मध्यवर्गीय आधुनिक परिवारों का प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है। इस नाटक के माध्यम से नाटककार ने यह दिखाने की चेष्टा की है कि किस प्रकार आधुनिक व्यक्ति की आकांक्षाएँ बढ़ती जा रही है, उनका लक्ष्य निश्चित न होकर अनिश्चित है सभी स्तरीकरण की अंधी दौड़ में शामिल हो रहे हैं, और उद्देश्यहीन जीवन को जीते हुए अनैतिकता के पतनरूपी गड्ढे में गिरते जा रहे हैं।